बी. एल. आच्छा

ई-मेल:balulalachha@yahoo.com

अस्तित्व

मालूम नहीं किस अवस्था में वह रेल के प्लेटफार्म पर आया था। अभी वह अपनी मौज में प्लेटफार्म पर ही कूदता-फाँदता रहता है। कभी फटे पायजामे में, कभी उघड़ी हुई मैली-कुचैली पैंट में। साथ में ऐड की लम्बी पतली डाल में कपड़ा लगाये ऐसे दौड़ता है जैसे किसी जूलूस का नेतृत्व कर रहा हो। कोई दया-माया से बचा-खुचा बासी दे देता है, तो सातवें वेतनमान की तरह उसका चेहरा खिल जाता है। पर मन नहीं हो, तो अनेदखा कर इधर-उधर भटकता रहता है। कभी सूने आसमान में हाथों से इशारे करता किसी रहस्यवादी-से आई.एस.डी./ एस.टी.डी. करता रहता है। न जाने उसके लिए नल कब आये थे? न जाने कब उसे साबुन मिली थी? या कि उसने किसी के उतरे हुए कपड़े पहनकर कभी साबुन पानी लगाया या कि नहीं। न जाने अपने रिश्तों के लिए अन्तिम बार कब रोया ? वह न गरीबी रेखा में है, न अमीरी रेखा के ऊपर। न परिचय-पत्र, न कपून। सरकारी प्लेटफार्म नापने वाला वह किसी दस्तावेज में भी नहीं। मनोचिकित्सकों को धता बताते हुए वह अपने भीतर ही मुस्कुराता खाता-पीता, कभी भूख-प्यास को भी अंगूठा दिखाता, भागता फिरता है। कभी कोई सैलून, कभी कोई दुलारा-सा हाथ, कभी कोई दया-माया उसके बालों को सँवार नहीं पाई। न कभी अखबार की सुर्खी बना, न जनता की जबान। अलबत्ता किसी को छेड़ना नहीं। खाना खाते मुसाफिरों के सामने खड़ा नहीं होता। इतनी समझ के बावजूद वह समझदार नहीं है। इसी समाज की सृष्टि। इसी समाज से इतना दूर।

नशा

वह बेचैन हो गया था। उसे तलब होती थी बोतल की। पर दो दिन से उसके कंठ तर नहीं हुए थे। यों कई बार उसने कामगार पत्नी पर हाथ उठाये हैं। बच्चों की जमकर धुनाई की है। पर इस बार कुछ हाथ नहीं आया, तो बोला—"मैं कंट्रोल के इस राशन को ही बेच आऊँगा।" और वह बोरा उठाकर बाहर निकला। उसकी पत्नी किसी घर के बर्तन माँजकर आई ही थी। बच्चों की भूख का उसे अंदाज था। आटा भी एक ही समय का बचा था। हारकर उसने कहा—"ये लो पच्चीस रुपये, अभी मेरे पास इत्ते ही हैं।" मगर वह बोला, "ठेकेवाला मेरा बाप नहीं लगता, वह तो तीस ही लेगा।" और फिर उसका हाथ गेहूँ के बोरे पर चला गया।

"लेकिन मुझे तो अभी ज्यादा बर्तन माँजने के चक्कर में पच्चीस रुपए ही मिले हैं, बाकी तो एक तारीख को ही मिलेगा।" रुलाई के स्वर में उसकी बीवी ने कहा।

मगर किसी साहूकार के अंदाज में वह बोला, "तीस से धेला भी कम में काम नहीं चलेगा।"

उसकी त्यौरियों से लगा कि वह अपनी बीवी से कुछ छीन लेगा, अगरचे उसके पल्लू में कुछ ठसा हो।

माँ के आँसूभरे चेहरे से उसकी बच्ची पिघल गयी। बोली, "बाबा, मेरे पास पाँच रुपये हैं, ये ले लो।"

माँ तो सकते में पड़ गयी। मगर बाबा की बाँछें खिल गयी। बोला—"ला बेटा।"

बेटी ने पाँच रुपये दे दिये। कंठ के तर होने की खुशी में पिता की आँखों का करुणा-जल सूख-सा गया था।

लेकिन थोड़ी ही देर बाद कुछ कदमों की आहट हुई। पत्नी ने सोचा कि लड़खड़ाते कदम लौट आए होंगे। पर शराबतलबी पति के चेहरे पर तरलता ऐसी जैसे ताजा आँसुओं को पोंछ दिया हो। तलब का तूफान आँखों में ठहर -सा गया था। उसने बेटी को आवाज दी और जेब से चाकलेट निकालकर नन्हीं बेटी के हाथ में थमा दी।

पत्नी, बेटी और पिता के चेहरों की बदली हुई रंगत एक-दूजे को निहार रही थी।